भारतीयता के साकार रूप हैं हमारे राम

- लेखक : दुर्गा प्रसाद गौड़
- तारीख : April 18, 2026

मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान श्रीराम का चरित्र केवल पूजने का विषय नहीं है, अपितु यह जीवन के प्रत्येक पग पर अनुकरण करने योग्य एक शाश्वत मार्गदर्शिका है। श्री दुर्गा प्रसाद गौड़ जी का यह विचारपूर्ण लेख श्रीराम के उसी उदात्त चरित्र की विशद विवेचना करता है जो सम्पूर्ण भारतीयता का सच्चा बिम्बरूप है। इस लेख में श्रीराम की अगाध पितृभक्ति, वनवास काल में उनकी सहज सामाजिक समरसता और रावण वध के पश्चात ज्ञान के प्रति उनके लोकोत्तर सम्मान जैसे प्रेरक प्रसंगों को अत्यन्त गम्भीरता से उभारा गया है। यह लेख हमें यह स्मरण कराता है कि सच्चा महान् व्यक्ति वही है जो अपने घोर शत्रु के भीतर विद्यमान ज्ञान का भी पूरी विनम्रता के साथ आदर करे।

मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान श्रीराम का पावन चरित्र एक ऐसा जाज्वल्यमान सूर्य है जिसके प्रकाश में सम्पूर्ण मानवता अपने श्रेष्ठतम स्वरूप को प्राप्त कर सकती है। भारतीय वाङ्मय और जनमानस में श्रीराम का स्थान अत्यन्त उच्च, अद्वितीय और पवित्र है। उनका जीवन केवल मन्दिरों में बैठकर वन्दना करने का विषय नहीं है, अपितु यह एक ऐसा व्यावहारिक और आदर्श प्रतिमान है जिसका सहज अनुकरण कर कोई भी साधारण मनुष्य देवत्व की ऊँचाइयों को स्पर्श कर सकता है।

उनके सम्पूर्ण जीवन-काल के प्रत्येक प्रसंग में हमें ऐसे शाश्वत जीवन-मूल्य प्राप्त होते हैं जो मनुष्य को निरन्तर श्रेष्ठ और मर्यादित बनने की प्रेरणा प्रदान करते हैं। वस्तुतः श्रीराम केवल एक राजा या अवतार नहीं हैं, बल्कि वे सम्पूर्ण भारतीयता और सनातन परम्परा के साक्षात् बिम्बरूप हैं। श्रीराम के इस अनुकरणीय चरित्र का सबसे पहला और अत्यन्त उत्कृष्ट उदाहरण उनकी अगाध पितृभक्ति और आज्ञापालन की निष्ठा में दृष्टिगोचर होता है।

पितृ आज्ञा के प्रति अगाध श्रद्धा

जब अयोध्या के राजमहल में राज्याभिषेक की भव्य तैयारियां चल रही थीं, ठीक उसी समय महारानी कैकेयी ने महाराज दशरथ से अपने पूर्व में दिए गए दो वरदान मांग लिए। इन वरदानों के अन्तर्गत भरत के लिए अयोध्या का राजसिंहासन और श्रीराम के लिए चौदह वर्ष का कठोर वनवास मांगा गया था। इस अप्रत्याशित और कठोर निर्णय को सुनकर सम्पूर्ण अयोध्यावासी शोक के गहन सागर में डूब गए थे, परन्तु श्रीराम ने अपने मुखमंडल पर बिना किसी विरोध, क्लेश या निराशा के उस निर्णय को अत्यन्त सहर्ष और अविकल भाव से स्वीकार कर लिया।

माँ द्वारा मागे गए वचन की सहर्षपूर्ति

वे भली-भांति जानते थे कि यह निर्णय उनके लिए अत्यन्त कष्टदायक और कण्टकाकीर्ण होगा, फिर भी उन्होंने अपने पिता के वचनों की गरिमा और रघुकुल की मर्यादा की रक्षा को ही अपने जीवन का सर्वोपरि लक्ष्य माना। श्रीराम के जीवन की यह

ऐतिहासिक घटना सम्पूर्ण विश्व को यह महान् शिक्षा देती है कि धर्म और अपने कर्तव्यों की रक्षा के लिए मनुष्य को अपने सबसे बड़े व्यक्तिगत सुखों और अधिकारों का त्याग करने के लिए भी सदैव तत्पर रहना चाहिए।

वनवास के उस सुदीर्घ कालखण्ड में श्रीराम का लोक-व्यवहार अत्यन्त सरल, सौम्य और आत्मीय रहा। उन्होंने महलों के ऐश्वर्य को त्यागकर वनवासी समाज, तपस्वी ऋषि-मुनियों और साधारण जनमानस के साथ अगाध स्नेह और सम्मान का आत्मीय सम्बन्ध स्थापित किया। निषादराज गुह को अपना अभिन्न मित्र मानना, केवट के निश्छल प्रेम को स्वीकार करना, माता शबरी के जूठे बेर अत्यन्त आनन्द से ग्रहण करना और वानरराज सुग्रीव के साथ अग्नि को साक्षी मानकर मैत्री करना-ये सभी ऐतिहासिक प्रसंग इस बात के अकाट्य प्रमाण हैं कि श्रीराम की दृष्टि में संसार का प्रत्येक मनुष्य सर्वथा समान था।

उनके निर्मल हृदय में ऊँच-नीच, जाति-पांति या पद के अहंकार का लेशमात्र भी स्थान नहीं था। समाज के अन्तिम और उपेक्षित व्यक्ति को भी हृदय से लगा लेने की यह समता और अपार करुणा ही उनके चरित्र को सबसे महान् और वन्दनीय बनाती है। मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम के जीवन में अपार करुणा के साथ-साथ अजेय साहस और अटल धैर्य का भी अद्भुत सन्तुलन देखने को मिलता है।

श्रीराम के हृदय में सबके प्रति रहा समभाव

जब लंकापति रावण ने छलपूर्वक माता सीता का हरण कर लिया, तब श्रीराम ने किसी साधारण मनुष्य की भांति अपनी नियति के समक्ष आत्मसमर्पण नहीं किया। उन्होंने अत्यन्त धैर्य और साहस के साथ उस भीषण संकट का सामना करने का दृढ़ निश्चय किया। वनवासियों, वानरों और भालुओं की एक विशाल सेना को संगठित कर उन्होंने लंका पर आक्रमण किया और अन्ततः रावण का वध करके अधर्म पर धर्म की सर्वकालिक विजय स्थापित की।

यह ऐतिहासिक घटना इस बात को पुष्ट करती है कि अन्याय और अत्याचार को मूक दर्शक बनकर सहना कायरता है, और उसके विरुद्ध सम्पूर्ण सामर्थ्य के साथ संघर्ष करना ही मनुष्य का सबसे बड़ा और सच्चा धर्म है। श्रीराम के इस तपोमय चरित्र की एक अत्यन्त प्रेरक और विलक्षण विशेषता उनका लोकोत्तर विनय और ज्ञान के प्रति उनका अगाध सम्मान है।

इसका सबसे श्रेष्ठ उदाहरण रावण-वध के समय का वह प्रसिद्ध प्रसंग है जो भारतीय संस्कृति की वैचारिक महानता को रेखांकित करता है। जब भयंकर युद्ध के अन्त में रावण बाणों से छिन्न-भिन्न होकर रणभूमि में मृत्यु-शय्या पर पड़ा था और

उसकी सांसें कुछ ही पलों की शेष थीं, तब श्रीराम ने अपने अनुज लक्ष्मण को अपने समीप बुलाया। उन्होंने लक्ष्मण को यह निर्देश दिया कि रावण चारों वेदों का ज्ञाता और परम विद्वान है, अतः वे उसके पास जाकर राजनीति और जीवन का कुछ अमूल्य ज्ञान अवश्य प्राप्त करें।

अपने अग्रज की यह बात सुनकर लक्ष्मण पहले तो अत्यन्त आश्चर्यचकित रह गए, क्योंकि रावण उनका सबसे बड़ा शत्रु था और उसी के कुकृत्यों के कारण माता सीता को असीम कष्ट सहने पड़े थे। फिर भी वे श्रीराम की आज्ञा का पालन करते हुए रावण के समीप गए और उसके सिर की ओर जाकर दम्भपूर्वक खड़े हो गए। लक्ष्मण ने रावण से ज्ञान देने का आग्रह किया, किन्तु मृत्यु के निकट पहुँचा हुआ रावण पूर्णतः मौन रहा और उसने एक भी शब्द नहीं कहा।

जब लक्ष्मण निराश होकर लौट आए और श्रीराम को यह पूरी बात बताई, तब श्रीराम ने मुसकराते हुए उन्हें अत्यन्त गम्भीरता से समझाया। श्रीराम ने लक्ष्मण से कहा कि जब हम किसी विद्वान से ज्ञान प्राप्त करने की अभिलाषा रखते हैं, तो हमारे भीतर पूर्ण विनम्रता का होना नितान्त आवश्यक है। उन्होंने स्पष्ट किया कि याचक को सदैव गुरु के चरणों की ओर ही खड़ा होना चाहिए, न कि अहंकारपूर्वक उसके सिर की ओर।

श्रीराम के इस गूढ़ उपदेश को सुनकर लक्ष्मण ने अपना अहंकार त्याग दिया और वे पुनः रावण के पास गए। इस बार वे अत्यन्त विनम्रतापूर्वक रावण के चरणों की ओर हाथ जोड़कर खड़े हो गए और उससे राजनीति तथा जीवन की शिक्षा देने का सविनय निवेदन किया। लक्ष्मण की इस विनयशीलता को देखकर रावण अत्यन्त सन्तुष्ट हुआ और उसने मृत्यु से पूर्व लक्ष्मण को कुछ अत्यन्त महत्त्वपूर्ण नीतियां प्रदान कीं।

रामजी के आदेश पर रावण से ज्ञान लेते अनुज लक्ष्मण

रावण ने उपदेश दिया कि मनुष्य को किसी भी शुभ कार्य को करने में तनिक भी विलम्ब नहीं करना चाहिए और अशुभ कार्य को जहाँ तक सम्भव हो, निरन्तर टालते रहना चाहिए। रावण ने अपनी भूल स्वीकार करते हुए यह भी कहा कि उसने अपने जीवन में अपार ज्ञान और सिद्धियां तो प्राप्त कर ली थीं, परन्तु अहंकार और अधर्म के कारण वह उनका कभी सही उपयोग नहीं कर सका।

अन्त में उसने यह सबसे बड़ी शिक्षा दी कि मनुष्य को अपने किसी भी शत्रु को कभी भी कमज़ोर या छोटा नहीं समझना

चाहिए, ठीक वैसे ही जैसे उसने वनवासी राम और वानर सेना को तुच्छ समझने की भयंकर भूल की थी। यह पूरा प्रसंग श्रीराम के उस महान् और उदात्त चरित्र का अद्भुत उदाहरण है जिसकी कल्पना भी दुर्लभ है।

जिस व्यक्ति ने उनकी अर्धांगिनी का हरण किया और जिसके कारण इतना प्रलयंकारी युद्ध हुआ, उसी घोर शत्रु के ज्ञान का सर्वोच्च सम्मान करने की प्रेरणा श्रीराम अपने अनुज को देते हैं। इससे यह भली-भांति स्पष्ट हो जाता है कि श्रीराम के लिए ज्ञान, विनम्रता और मर्यादा संसार की किसी भी अन्य वस्तु से अधिक महत्त्वपूर्ण थे।

वे यह दृढ़ता से मानते थे कि यदि किसी व्यक्ति में ज्ञान और पाण्डित्य विद्यमान है, तो उससे शिक्षा ग्रहण करने में लेशमात्र भी संकोच नहीं होना चाहिए, चाहे वह व्यक्ति हमारा सबसे बड़ा शत्रु ही क्यों न हो। श्रीराम का यह व्यापक दृष्टिकोण भारतीय सनातन संस्कृति की उस महान् परम्परा को भी दर्शाता है जिसमें सर्वत्र ज्ञान को ही सर्वोच्च और पूजनीय स्थान दिया गया है।

श्रीराम ने अपने पुनीत आचरण से सम्पूर्ण मानवता को यह सिद्ध कर दिखाया कि सच्चा विजेता और महान् व्यक्ति वही होता है जो अपने भीतर के अहंकार को पूर्णतः नष्ट कर सत्य और ज्ञान के समक्ष अपना सिर झुका सके। श्रीराम का यह अनुकरणीय चरित्र केवल त्रेतायुग या किसी प्राचीन काल की गौरव-कथा मात्र नहीं है, अपितु यह आज के आधुनिक समाज के लिए भी नितान्त प्रासंगिक और आवश्यक है।

आज के इस युग में जब मनुष्य स्वार्थ, पद के अहंकार, भौतिक लोभ और असहिष्णुता के कारण अनेक मानसिक और सामाजिक संघर्षों में निरन्तर उलझता जा रहा है, तब श्रीराम का तपोमय जीवन हमें विनम्रता, असीम संयम और निस्वार्थ धर्मपालन का एक सच्चा मार्ग दिखाता है। उनके पावन जीवन से हमें यह शाश्वत शिक्षा मिलती है कि मनुष्य को हर परिस्थिति में सत्य, लोक-कल्याण और मर्यादा के प्रशस्त मार्ग पर ही चलना चाहिए।

अन्ततः यह निर्विवाद रूप से कहा जा सकता है कि श्रीराम का चरित्र भारतीय संस्कृति की सबसे अमूल्य और कालजयी धरोहर है। रावण से शिक्षा लेने का वह ऐतिहासिक प्रसंग हमें निरन्तर यह स्मरण कराता रहेगा कि ज्ञान और विनम्रता का मूल्य संसार की किसी भी परिस्थिति में कभी कम नहीं होता।

यदि आज का मनुष्य श्रीराम के इन महान् आदर्शों को अपने जीवन में रत्ती भर भी आत्मसात कर ले, तो इस समाज में पूर्ण शान्ति, अखण्ड समरसता और सद्भाव की स्थापना होना सर्वथा सम्भव है। वस्तुतः इसी कारण श्रीराम को केवल एक पूजनीय देवता ही नहीं, अपितु सम्पूर्ण मानवता के सच्चे और अनुकरणीय आदर्श पुरुष के रूप में युगों-युगों तक स्मरण किया जाता रहेगा।

-दुर्गा प्रसाद गौड़
(लेखक जिला एम.आई.एस. प्रबंधक व सांस्कृतिक चिंतक हैं, जो प्रशासनिक दायित्वों के साथ भारतीय अध्यात्म, संस्कृति और धार्मिक पर्यटन के विषयों पर निरंतर वैचारिक योगदान करते हैं।)